डाउनलोड मुद्रण

अ+ अ-

कहानी

उजड़ गया मेरा पड़ोसी

संतोख सिंह धीर

अनुवाद - गुरचरण सिंह

जरनैली सडक़ पर मज़हब के सताये हुए लोगों का चार मील लम्बा काफिला नए वतन की ओर जा रहा था।

मैं कहीं बाहर से अपने गाँव की ओर आ रहा था। मेरीज़ मंजिल से लगभग दो मील पहले—काफिले के बीच में—हमारी बस खराब हो गयी। सवारियाँ उतर कर सडक़ से नीचे की ओर बिखर गयीं और ड्राइवर इंजन का घूँघट उठाकर नुक्स देखने लगा।

सडक़ के बायीं ओर, सुस्त गति से बैलगाडियाँ चीख रही थीं, जैसे कि पहिये धुरी पर विवश घूम रहे हों। भूखे, हाँफते हुए बैलों के कन्धों पर पूरे-पूरे कुटुम्ब का भार था। बैल बीमारों की तरह चल रहे थे उनके मालिकों के दिल उनकी चाल से सहमत नहीं थे। दूसरी ओर बैलों के पैरों से उड़ती धूल हवा की लहरों से चिपकती चारों ओर फैल रही थी।

बैलों के कंठों में घुँघरू नहीं बँधे थे। किसी-किसी बैलगाड़ी से बच्चों के सिसकने-रोने की आवा$जें आ रही थीं।

बैलगाडियों पर लाशों-से भूखे पिंजर बेचारगी से चुपचाप देखते जा रहे थे। उनके पीले चेहरे धूल से धुँधलाये हुए थे। उनकी सड़ी-गली ज़िन्दगी पर मक्खियाँ भिनभिना रही थीं, और हवा की खुश्क लहरों के साथ एक बदबू वायुमंडल में फैल रही थी।

मेरी इच्छा हुई, उजडक़र जा रहे लोगों को, और एक बार करीब से देख लूँ।

दो क़दम उठाते ही मैं ऊबड़-खाबड़ में सडक़ के दायें किनारे पर पहुँच गया। अचानक एक तरफ बैलगाडियाँ खड़ी होने लगीं। शायद काफ़िले को रोका गया था।

मैं सुरमई सडक़ पर हो गया और लम्बी पंक्ति में खड़ी, प्रत्येक गाड़ी को देखता, धीरे-धीरे आगे बढऩे लगा।

किसी बैलगाड़ी से जब किसी की उदास आँखें मेरी ओर देखतीं तो मुझे देखते ही एकदम हट जातीं। प्रत्येक गाड़ीवान एक बार तो मेरी शक्ल से डर जाता जैसे मेरी आँखों में उन्हें बरछे चमकते नज़र आ रहे हों। मैं सुरमई सडक़ से हटकर फिर कच्ची पटरी पर आ गया।

तकरीबन तीन बैलगाडियों के बाद, अचानक एक गाड़ीवान ने मेरी ओर देखा। उसकी नज़रें मुझसे हटते-हटते फिर मेरी ओर हो गयीं। उसने फिर मेरी ओर देखा और उसके चेहरे पर हल्की-सी मुस्कराहट उभर आयी। उसकी आँखों में चमक आ गयी जा इस काफिले में बिल्कुल अनहोनी बात थी।

गाड़ीवान एक छलाँग में गाड़ी से उतरकर मेरी ओर बढ़ा—जैसे कि उसकी छाती में कोई गोला फट गया हो—उसे छुरछुरी-सी महसूस हुई और वह फूटकर रो पड़ा।

''ओ...हो...दुल्ला! बहुत बुरा हो गया यार! तू तो पहचान में भी नहीं आ रहा।'' मैंने उसे देखकर कहा।

दुल्ले की सिसकी से गाड़ी में निढाल, बेहोश-सी लेटी जैनब के दिल को धक्का लगा। बाप का रोना सुनकर तो बेटियाँ कब्रों में भी जाग जाती हैं।

''अब्बा...तुम...इधर आ जाओ...।'' जैनब ने मरी हुई आवाज़ में कहा। उसकी आँतें जैसे अकड़ गयी हों। उसने मुझे पहचाना नहीं था। बैलगाड़ी से दूर जा रहे अब्बा को यह मौत के जबड़ों में जाता हुआ समझ ही थी।

''दुल्ला! मेरे भैया, आओ हम कोई बात करें।'' मैंने दुल्ला को सान्त्वना देते हुए उसके कन्धे पर हाथ रखते हुए कहा। उसके गाल आँसुओं से भीग चुके थे। उसने सिसकियाँ लेते हुए, अपनी कमीज़ के मैले पल्ले से आँखें और नाक पोंछा। रो-रोकर वह थक चुका था, उसकी आँखों लाल हो गयी थीं। उसने अपने को सँभालते हुए मेरी ओर देखा, और धीरे-सी गर्दन घुमाकर उसने अपनी बेटी से कहा, ''बेटी जैनब, गुरबचनसिंह खड़ा है..., अपना पड़ोसी..., मिल लो...।''

उसने ढीली बाँहों से बैलगाड़ी का सहारा लिया जिससे उसकी कोहनियाँ बाहर की ओर निकल आयीं। उसकी कमर के ऊपर खोंची लुँगी गाड़ी की बाँहों के ऊपर तक उड़ रही थी।

मेरा नाम सुनते ही जैनब फूट-फूटकर रो पड़ी। उसकी पसलियों में साँस खींचने की भी ताकत नहीं थी। पर रोने के लिए उसमें पता नहीं कहाँ से हिम्मत आ गयी थी। उसके रुदन को सुन बैलों की आँखों से भी आँसू बहने लगे।

दुल्ला हमारे गाँव का राठ गूजर कहलाता था। बीस-बीस कोस तक उसकी धाक थी। सारे गाँव के डाँगर वही चराता था। साथ ही बकरियों का एक झुंड भी पालता था। ऐसा कभी नहीं हुआ कि उसकी सुपुर्दगी में डाँगर किसी के खेत में घुसे हों और उन्हें किसी दूसरे गाँव के फाटक में बन्द होना पड़ा हो।

उनके साथ काम पड़ता रहा था।

हमारे मकान के पीछे, पशुओं के बाड़े के साथ, उसकी बकरियों का बाड़ा था। मेरे पिताजी बताया करते थे कि दुल्ले के ताऊ सुलेमान ने एक बार हमें विश्वास दिलाया था—'सावनसिंह, तुम्हारा माल हमारा माल, कोई फ़र्क तो नहीं, तुम घर में आराम से सोया करो। तुम्हारे डाँगरों की देखभाल करके हम थक नहीं जाएँगे।' तभी से हमने कभी अपने पशुओं के पास चारपाई नहीं बिछायी।

जैनब मेरी बहनों की पक्की सहेली थी। वे जब मिलकर सूत कातने बैठती तो सुबह तक लगी रहतीं। इकट्ठे मिल औरतों ने गाना, झूले झूलने। वे एक साथ उठती-बैठतीं, सोचती-विचारतीं। मिलकर वे सुन्दर फुलकारी काढ़तीं।

हमारी अजब रंगों वाली दरियाँ उनकी साँझी आकांक्षाओं के रंगीन उदाहरण हैं। जैनब का दाज मेरी बहनों ने मिलकर बनाया था। और अब जैनब मेरी बहनों के साथ मिलर उनका दाज तैयार करवा रही थी।

जैनब मुझे सगी बहन-सी लगती थी। वह मुझे सदा 'वीर' कहकर ही बुलाती थी। जब कभी वह मेरी किसी बहन से छीना-झपटी करती तो मेरे लिए फैसला करना मुश्किल हो जाता। किसका दोष निकालूँ—किसको डाँटूँ!

जब उसकी डोली जा रही थी तो उसके रिश्तेदारों के साथ मेरी बहनें भी खूब रोयी थीं। उनके रिश्तेदारों ने छींट के कपड़े और चाँदी के आभूषण पहने हुए थे—उनमें मेरी सादी बहनें अलग लग रही थीं। पर आत्मा से निकले दर्दीले विलाप से मैं अपनी बहनों की आवाज़ को पहचान नहीं पाया था।

उसके भाई और बाप ने अपनी साधारण पगडिय़ों के कानों पर लटकते पल्लों से आँखें पोंछी थीं। जबकि वे राठ थे, पर बेटियों को विदा करते समय अच्छे-अच्छे तीसमारखाँ भी निरीह हो जाते हैं। जैनब अपने मामा के आलिंगन में उसके गले से लगी, एक अजीब काँपते स्वर में ऊँ-ऊँ करके रो रही थी। इस लय में औरत ज़िन्दगी में शायद एक बार ही रोती है। उसके रोने की थिरकती लय में मेरा दिल डूबता जा रहा था, जैसे नदी की लहरों के बार-बार किनारे से टकराने से किनारा धुल जाता है। दो आँसू मेरी पलकों से निकलकर धरती पर गोल बूँदों के रूप में गिर गये थे।

वही जैनब अब मुझे पराया समझ रही थी, जैसे उसके दिल से विश्वास उठ गया हो। उसके मन में सन्देह था —'वीर-वीर' करती हुई भी तो बहुत-सी औरतें मारी गयीं...।

मेरे हृदय में भी छुरियाँ चल रही थी—बहन को आज भाई पर भी विश्वास नहीं रहा—उसी जैनब का हृदय आज मेरी परछाई से भी काँपता था। वही विवाहिता जब वापस लौटी थी तो मुझे इस तरह आलिंगन में लेकर मिली थी, जैसे अपने भाई जमाले को।

''अच्छा गुरबचनसिंह...आखिरी समय तुम मिल गये...।'' दुल्ला ने गले में रुके गुबार का घूँट भरते हुए कहा। बड़ी मुश्किल से उसके गले से आवाज़ निकली।

''समय का फेर है, दुल्ला, कुछ हवा ही बुरी चल पड़ी है। अच्छे-भले आदमी पशु बन गये हैं।''

''बचनसिंह, अल्लाह जानता है, हमने तो कभी किसी का कुछ नहीं बिगाड़ा...हम तो निर्दोष हैं,'' दुल्ला की नीचे की ओर लटक रही मूँछें काँप गयीं और उसकी दाढ़ी के बाल बुर्श की तरह अकड़े खड़े रहे जिसमें धूल का मैलापन झाँक रहा था।

''सच, नूर, जीनाँ, कैमी, गोहर और छोटी मुनिया फाताँ नज़र नहीं आयीं।''

''सभी को अपनी-अपनी जान बचाने की पड़ गयी थी। भगदड़ में बच्चों को कौन सँभालता? पीरू डूम के बेटे नजीर ने बताया था कि गोरे के खेतों में उन्हें मार दिया जहाँ वे टीकरियों से खेला करते थे।'' दुल्ला की आँतें जैसे चुपचाप रो दी हों। उसके बन्द होंठों और ठोढ़ी पर गम काँप गया। ''मैं, जैनब और वह गाम का छोटा बच्चा तीन दिन ईख में छिपे रहे। और एक रात जब हो-हल्ला कुछ शान्त हुआ तो मौका पाकर हम रोजीं में जा छिपे, तब कहीं जान बची।''

''खैर, अच्छा दुल्ला, तेरी कजान तो बच गयी। सब-कुछ फिर से ठीक हो जाएगा।''

''अच्छा, शुक्र है उस परमात्मा का...'' दुल्ले ने आसमान की ओर अदब से संकेत करते हुए कहा। दूर, ऊँचाई पर कौवों की एक पंक्ति उड़ती हुई गाँव की ओर जा रही थी। दुल्ले की आँखों में इच्छा और लालच चमक उठा—''यदि मैं कहीं कौवा बन जाऊँ...जाती बार तो अपने गाँव की मुँडरों पर $खूब उड़ूँ...मेरी जान को कोई खतरा नहीं होगा...मेरा कौन-सा कोई मज़हब होगा...!''

पंक्ति दूर निकल गयी थी, जैसे कि कौवे मच्छर बन गये हों। दुल्ले ने कौवों की दूरी जितना लम्बा साँस लिया।

''बेटी जैनब! तू भी कोई बात कर ले, भैया खड़ा है।'' दुल्ले ने बेटी पर दया और लाड़ करते हुए कहा।

जैनब का रुदन अब टूटी हुई सिसकियों में बदल गया था। वह रो-रोकर निढाल हो गयी थी। उसकी फटी हुई चुनरी आँखों के पानी में डूबकर लाल-लाल मछलियों-सी लग रही थी।

उसके मुँह से आवाज़ निकली—''भैया, तुम मुझे अब भी रख लो...हम तुम्हारे धर्म में आ जाते हैं।''

''बहन, आज मेरा कोई धर्म नहीं। यदि मेरा धर्म होता तो मेरे सामने आप इस तरह बेघर न होते।''

''अच्छा...भैया...।'' जैनब ने एक पल के लिए आँखें फाडक़र मेरी तरफ देखा, जैसे कि अँधेरे में वह कोई सुरक्षा की किरण तलाश रही हो। पर जल्द ही उसकी अधबुझी आँखों पर धूल-सनी पलकें झुक गयीं। उसका दिल चीख उठा। उसने महसूस किया—'बहन को घर की तरफ आते देखकर निर्मोही भैया ने दरवा$जा बन्द कर लिया।''

''अच्छा बचनसिंह, गाँव के दरवाजे को हमारा सलाम कहना। और बरसात के पानी में हमारे मकान-कोठे का ध्यान रखना। कहीं छत चूने न लगे। हमारे परदादे के समय से यह छत हमें ओट देती रही है। सूने घर की पर्तें उतर-उतरकर मकान को खोखला कर देती हैं।''

''तुम्हारे कोठे की...।'' मेरे मुँह से सच निकलने लगा था कि—'अभी तुमने चौखट ही पार की होगी, तुम्हारे जाते ही उसमें आग की लपटें जल उठीं। नीली जीभों वाली आग की लपटें सर्पिणियों की तरफ फुँकार रही थीं, जिनकी लपेट में तुम्हारी छत की सड़ी कडियाँ तिडक़-तिडक़र जल गयीं और लपटों की गरमी से अधजली दीवारों में दरारें पड़ गयीं।' पर सच कभी-कभी बरछे-सा चुभता है और बहुत दु:ख देता है। और हम सच से वाकिफ़ होते हुए भी जब झूठ को सुनते हैं तो आत्मा प्रसन्न हो जाती है।

दु:खते हुए दिल को और दु:खी क्यों करूँ? मैं उसे सच बताते-बताते रुक गया और धीरे-से कहा—''तुम बेफ़िक्र रहो, दुल्ला। तुम्हारे घर का मैं ध्यान रखूँगा।''

हम सडक़ की कच्ची पटरी से उतरकर कुछ नीचे की ओर हो गये। रक्षक सिपाहियों की एक बस आधी कच्ची और आधी पक्की सडक़ पर चलती-लुढक़ती आ रही थी। घूँ-घूँ करती लुढक़ती बस हमारे पास से गुजर गयी। धूल का एक भूरा बादल धरती से उडक़र वायुमंडल में बिखरने लगा। दूर तक इस बादल में संगीनों की तेज जीभें चमकती जा रही थीं।

बादल थककर बिरला हो गया था। धूल की खुश्की धीरे-धीरे काफ़िले पर गिरती हुई जमती चली गयी।

''अच्छा, गुरबचन! अल्लाह ने चाहा तो कहीं फिर मिलेंगे, जिन्दा या...।''

''जरूर मिलेंगे दुल्ला, तुम चिन्ता मत करो। मिले बिना अपना काम नहीं चलेगा...आख़िर हमें एक होना ही पड़ेगा।''

''पर, मुझे तो आशा नहीं।''

''तू तो बावला है। नाखूनों से कभी मांस अलग नहीं होता। यह तो सब अँग्रेजों की चाल है। हमें भडक़ाकर भुतहा बना दिया। भाई ने भाई का पेट फाड़-कर चिथड़े कर दिया।''

''चलो भी! ससुरे कैसे मेंढकों से उछलकर अलग हो जाते हैं।'' काफ़िले के साथ-साथ पैदल गश्त कर रहे $फौज़ियों ने जिनके कन्धों पर सफेद जीभों वाली बन्दूकें थीं, सडक़ के किनारे बैठकर घास उखाड़ रहे लोगों से कहा, जो काफिला रुक जाने पर अपने बैलों के पेट भरने के लिए घास उखाडऩे लग जाते थे।

धीरे-धीरे काफिला सरकने लगा। बैलों ने फिसलने वाली स्लेटी सडक़ पर अपने पिछले खुरों को अड़ाकर अपनी गर्दनों पर पूरे कुटुम्ब का भार खींचा। दम लगाते बैलों की आँखें चौड़ी होकर जैसे फटने लगी हों। गाड़ी के पहिये धरती में धँसे जा रहे थे। निर्दयी गाड़ीवानों ने बैलों की पूँछों को मरोड़ा और उनकी जाँघों के बीच अपने डंडे को चुभाया। पहिये विवश हो घूरी पर घूमने लगे। गाडिय़ों की पसलियों से निकली चीख, पहिये से निकली चीखों के साथ मिल काफिले की समूची चीख बनने लगी।

दुल्ला एक छलाँग में बैलगाड़ी की गर्दन पर जा बैठा। बैलों की सफेद पूँछों के उसने कुंडल बना दिये। उसने अपनी लटक रही टाँगों के अँगूठे बैलों की जाँघों के बीच लगाये। उसकी बैलगाड़ी के पहियों में से एक मार्मिक चीख निकली जो महान् चीख से मिलकर एकाकार हो गयी।

मेरी जेब में तीन रुपये सात आने थे। सवा रुपया मैंने किराया देना था। मैंने चलते-चलते दो का नोट जैनब की हथेली पर रख दिया और उसकी पतली और सूखी उँगलियों को बन्द करने लगा।

''वीर, तुम रहने दो, कष्ट मत करो।''

''रख लो, रख लो, मेरी बहन, कष्ट कैसा! मैं तेरा भाई नहीं...?'' मेरा गला रुँध गया। मैं खुलकर बोल न सका। मेरी आँखों में कुछ ऐसा था, जैसे कि मैं धुँधले शीशों में से देख रहा होऊँ।

''अच्छा...भैया, मिन्दो और प्रीतो को मेरा सलाम कहना।'' जैनब ने मेरी बहनों को सन्देश दिया—''और उन आँगनों को भी सलाम कहना जहाँ मेरा दिल बार-बार जाता है। हमारे पिछवाड़े वाले बाड़े में आम की जड़ों को कभी-कभी पानी दे देना। उसकी पौध मैंने बड़े चाव से $खुद लगायी थी। उसके चमकते हुए बैंगनी पत्ते कहीं सूखकर झड़ न जाएँ...।'' जैनब कहती गयी जैसे कि रोगी अन्त समय में बुड़बुड़ाता है।

शाम को थका सूरज पश्चिम में छुप गया और एक-एक करके बैलगाडिय़ों की लम्बी पंक्ति मेरे पास से सरकती ख़त्म हो गयी।

शीर्ष पर जाएँ